National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040
Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 660-664

हिन्दी–उर्दू लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री का बदलता स्वरुप (सन् 1980–2000 ई.)

इरम ख़ानम
शोधार्थी हिन्दी विभाग, ए.एम.यू. अलीगढ़, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखा जाये, तो स्त्री का स्वरुप प्रत्येक युग में युगीन परिस्थितिओं के अनुसार परिवर्तित होता रहा है। वैदिक युग से लेकर अब तक स्त्री के स्वरुप में व्यापक अन्तर देखा जा सकता है। वह मात्र माँ, पत्नी, पुत्री, बहू आदि रुपों से इतर भी अब समाज में अलग पहचान रखती है। यह परिवर्तन 19 वीं सदी से कुछ समाजसुधारकों जैसे राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, गोविन्द राणाडे, ईश्वरचन्द विद्यासागर मुस्लिमों में शेख अब्दुल्ला आदि के प्रयासों से सम्भव हुआ। जिन्होने भारतीय समाज में व्याप्त स्त्री सम्बन्धित अमानवीय प्रथाओं का विरोध किया, साथ ही स्त्री शिक्षा का प्रचार–प्रसार किया। इस कार्य में उच्च वर्ग की कुछ स्त्रियों जैसे ऐनी बेसेन्ट, पंडिता रमाबाई, भोपाल की दोबागार बेगम साहिब आदि ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्त्री शिक्षा के प्रसार ने भारतीय समाज में स्त्री का रुप ही बदलकर रख दिया। घर की चहारदीवारी की कैद से बाहर आई स्त्री को समझ में आया, कि उसका भी अपना अस्तित्व है। साथ ही बीसवीं सदी में स्त्रीवादी आन्दोलनों से स्त्री को गुलामी का आभास हुआ। जिसे सदियों से पुंसवादी समाज ने धर्म और परम्परा की दुहाई देकर अपनी दासी बना रखा था। स्त्रियों ने अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना प्रारम्भ कर दिया। स्वातंत्रता के बाद स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन के लिए संबैधानिक स्तर पर समान नागरिकता, शिक्षा, राजनैतिक सहभागिता दहेज और विवाह सम्बन्धि कानूनों का निर्माण हुआ जिससे स्त्री सशक्त हुई उसका स्वरुप भी परिवर्तित हुआ। नीरा देसाई अन्तिम दशक में हुए स्त्री जीवन में बदलाव के विषय में लिखती हैं–" महिलाओं ने शिक्षा और राजनीतिक सहभगिता में महत्वपूर्ण प्रगति की। मध्यवर्गीय महिलाओं ने कार्य के संसार में प्रवेश किया और ज़मीन से जुड़ी महिलाओं ने पंचायतों में सहभागिता करके...अपने सशक्तिकरण का प्रदर्शन किया।...आज की चुनौती महिलाओं में क्षमता निर्माण करना है, इसलिए वे असुरक्षित नहीं हैं वरन् अपने अधिकारों और उत्पीड़न की ताकतों के विरुद्ध अपनी रक्षा करने में समर्थ हैं। मध्य और उच्च वर्गीय महिलाओं के लिए सशक्तता का तात्पर्य अपनी जीविकावृत्ति का निर्माण, अपने विचारों की सुस्पष्टता एवं वरीयता...गरीब महिलाओं के लिए सशक्तिकरण का तात्पर्य अपनी आवश्यकताओं को व्यक्त करना और पति सरपंच या नियोक्ता की तानाशाही के आगे बिना झुके अपनी पहचान को बनाए रखना है।"[1] बीसवी सदी के अन्तिम दशकों तक आते–आते स्त्रियाँ इतनी सजग हो गईं, कि अपने अधिकारों की मांग करने लगी। इन बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव समाज और साहित्य दोनों पर पड़ा। लेखिकाओं ने भी रचनाओं में शिक्षित, सशक्त, आत्मनिर्भर पात्रों को चित्रित किया, जो अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हैं। रोते बिसूरते स्त्री पात्र अब कहानियों का विषय नही रहे।

हिन्दी–उर्दू साहित्य में लेखिकाओं का एक बड़ा समूह बीसवी सदी के आरम्भिक दशक में उभरकर सामने आया। कविता कहानी उपन्यास निबन्ध आदि साहित्य की प्रत्येक विधा में महिला लेखिकायें अपनी उपस्थिति दर्ज करवाने लगीं। अपनी स्थिति प्रस्थिति का चित्रण रचनाओं में करने लगीं। कहानी विधा का आरम्भ हिन्दी और उर्दू दोनो भाषाओं में बीसवीं सदी के आरम्भिक दशक में हुआ। आरम्भिक दशकों में महिला कहानीकारों ने जो कहानियाँ लिखीं उनमें स्त्री आदर्श रुपों में ही चित्रित थी। स्त्री समस्याओं पर्दा प्रथा, बाल विवाह, दहेज, अनमेल विवाह, सपत्नी ईष्या, वैश्या समस्या, संयुक्त परिवार की स्थूल समस्याओं आदि का चित्रण ही महिला लेखिकाओं की कहानियों में मिलता है। उस समय समाज की स्थिति कुछ ऐसी थी, कि महिला लेखिकाओं को अपने नाम का पर्दा रखना पड़ता था। तरन्नुम रियाज़ के शब्दों में– "यूँ तो अदीबायें (लेखिकायें) उर्दू अदब के उफक़ पर उन्नीसवीं सदी के आखिरी अय्याम में नज़र आने लगीं थीं, ताहम बाक़ायदा तौर पर वह बीसवीं सदी के आगाज़ से ही सरगर्म हुईं।....इस दौर में ख़ातीन उर्दू अदब के दो पहलू सामने आते हैं। अव्वल ये कि मख्सूस समाजी और शक़ाफती सूरते हाल के पेशे नज़र कुछ अदीबायें अपने असली नामों के तहत शाये (प्रकाशित) होने से कतराती हैं इनकी तख्लीक़ात (रचनायें) फरज़ी नामों से शाये होती थीं।"[2] यही स्थिति हिन्दी लेखिकाओं की भी थी। हिन्दी की पहली आधुनिक कही जाने वाली कहानी 'दुलाई वाली' राजेन्द्र बाला घोष ने लिखी बंग महिला उपनाम से। अर्चना वर्मा के अनुसार– " कहानी के इतिहास में वह 'बंग महिला' के नाम से प्रसिद्ध हुईं जो कि एक निर्वैयक्तिक नामहीनता के पीछे आत्मगोपन का प्रयास अधिक लगता है एक सुन्दर काव्योचित उपनाम का चुनाव कम। (थोड़ा आगे चलकर इस तरह के उपनाम और भी मिलते है जैसे कुमायूँमहिला, मिश्रमहिला आदि। इस बात का प्रमाण कि लिखना पड़ना एक निषिद्ध कर्म है सिर्फ छिपकर किया जा सकता है।)"[3] हिन्दी–उर्दू महिला कहानीकारों की एक लम्बी परम्परा मिलती है। चूँकि शोध पत्र का विषय 1980–2000 की लेखिकाओं पर केन्द्रित है अतः विस्तार से बचने के लिए इन लेखिकाओं का परिचय देना अनिवार्य नहीं समझती। फिर भी कुछ महत्वपूर्ण लेखिकाओं का परिचय संगत लगता है जिन्होने कहानियों में स्त्री की स्थिति का यर्थाथ चित्रण किया और स्त्री लेखन को नई दिशा दी। हिन्दी में 1950 के बाद उभरने वाली लेखिकाओं में कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, शिवानी, शशिप्रभा शास्त्री आदि। कृष्णा सोबती की मित्रो मरजानी में मित्रो नामक बोल्ड स्त्री पात्र मन्नू भंडारी 'यही सच है' में प्रेम के ऊहापोह में पड़ी स्त्री साहित्य में बदलते स्त्री के स्वरुप का उदाहरण हैं। कमलेश्वर ने पुरानी कहानी के विपरीत नई कहानी में स्त्री के स्वरुप को इस तरह रेखांकित किया– "आधुनिक नारी अब अपनी पूरी गरिमा' 'देह' सम्पदा और

वास्तविक सम्मान के साथ आई है। 'यही सच है', 'मित्रो मरजानी', 'लाल परांदा', 'जिन्दगी और गुलाब के फूल', आदि बहुत सी कहानियों की नारियाँ नितान्त प्रामाणिक सन्दर्भों और जीवन प्रसंगों से जुड़ी हुई हैं जो पुरुष के माध्यम से मूल्यों या उसके अर्थों की खोज से तृप्त नहीं हैं, वे अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ सहयोगी जीवन पद्धति की भागीदार हैं, या स्वंय जिम्मेदार।....औरतें अब औरतें हैं, वे झूठी सती या वैश्याएँ नही हैं, इसलिए नई कहानी खलनायिकाओं से शून्य हैं जिनकी पहले हर कदम पर जरुरत पड़ती थी। अब सम्बन्धों के दो ध्रुव हैं–स्त्री और पुरुष–जो सारी संगतियों और विसंगतियों के साथ अपनी प्राकृतिक अपेक्षाओं से सीधे–सीधे सम्बद्ध हैं।...नारी की देह अब उसके अपने निर्णय की वस्तु है। धोखाधड़ी, बलात्कार, दीदी वादी, भाभी वादी, विकृत परम्परा का मानसिक अत्याचार अब लेखकीय सहानुभूति का विषय नहीं रह गया है।"[4] उर्दू में पहली बार रशीद जहाँ ने पितृसत्तामक समाज में स्त्री की स्थिति को अपनी रचनाओं में चित्रित किया। 1932 में अंगारे पत्रिका में प्रकाशित उनकी एक कहानी और एकांकी 'पर्दे के पीछे' और 'दिल्ली की सैर' में ऐसे विषयों पर बेबाकी से लिखा, जिन पर कलम उठाना तो दूर, बात करना भी सभ्य समाज में वर्जित था। रशीद जहाँ को बहुत विरोध भी झेलना पड़ा। रशीद जहाँ की परम्परा को आगे बड़ाया इस्मत चुगताई ने, बोल्ड और बेबाक लेखन से साहित्य और समाज में हलचल मचा दी। कुर्रतुलऐन हैदर के यहाँ भी आधुनिक स्त्री का बदलता हुआ रुप देखने को मिलता है। इनकी 'पतझड की आवाज़' स्त्री जीवन पर आधारित महत्वपूर्ण कहानी है। आलोच्य युग में हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं की लेखिकाओं ने स्त्री को बदलती परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया। उनके पात्र शिक्षित, जागरुक, स्वाबलंवी होने के साथ–साथ पितृसत्ता द्वारा संचालित समाज में अपनी अस्मिता और अस्तित्व रक्षा के लिए संघर्षरत हैं। आलोच्य युगीन हिन्दी लेखिकाओं में ममता कालिया, मृदुला गर्ग, मेहरुन्निसाँ परवेज़, नासिरा शर्मा, चित्रा मुद्गल, मैत्रेयी पुष्पा, सूर्यबाला, नमिता सिंह आदि तथा उर्दू लेखिकाओं में शकीला अख्तर, जीलानी बानों, ज़किया मशहदी, निगार अज़ीम, तरन्नुम रियाज़, गज़ाल ज़ैगम, बानो सरताज, तबस्सुम फातमा आदि की कहानियों के आलोक में स्त्री के स्वरुप का अध्ययन करेंगे।

आधुनिक स्त्री अधिकारों के प्रति जागरुक है। वह अपने अधिकारों के हनन के विरुद्ध विद्रोह भी करती है। उन सभी अधिकारों का प्रयोग करना चाहती है; जो धर्म समाज और संविधान से उसे प्राप्त है। इन अधिकारों में एक अधिकार शिक्षा का भी है। स्त्री शिक्षा की व्यवस्था हमारे भारतीय संविधान में की गई। परन्तु फिर भी कुछ कारणों से स्त्री को शिक्षा से वंचित रखा जाता है। उनकी शिक्षा में कभी विवाह रोढ़ा बनता है कभी अर्थ। हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं की लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री पात्र शिक्षा के लिए संघर्ष करते दृष्टव्य होते हैं। नमिता सिंह की कहानी 'एक बेताल कथा और' में कल्पना को उच्च शिक्षा से इसलिए वंचित रखा जाता है क्योंकि उच्च शिक्षित होने पर माता–पिता को उसके लिए उच्च शिक्षित वर ढूढ़ना पड़ेगा। और उच्च शिक्षित वर दहेज में मोटी रकम माँगते हैं। ममता कालिया की कहानी 'चो्ट्टिन' कहानी में सुखिया की माँ अर्थाभाव में सुखिया का नाम स्कूल से कटवा लेती है। नासिरा शर्मा की कहानी 'दहलीज' में आर्थिक तंगी तथा दादी के रुढ़िवादी विचारों के कारण हुमैरा और उसकी बहनों की पढ़ाई बंद कर दी जाती है। तीनों बहनें पिता की आर्थिक स्थिति से परिचित हैं। इसलिए स्वंय ट्यूशन कर अपनी पढ़ाई का भार उठाना चाहती हैं। हुमैरा पिता से कहती है–" अब्बू मैं आगे पढ़ना चाहती थी मगर आपकी मजबूरी समझती हूँ इसलिए चाहती हूँ कि अपनी पढ़ाई का खर्च पार्ट टाइम जॉब से निकालूँ, आखिर इतना पढ़कर बेकार घर में बैठना अच्छा नहीं लगता।"[5] परन्तु दादी और भाई के कारण उन्हें अनुमति नहीं मिलती। सकीना का विवाह कर दिया जाता है जो ससुराल में खुश नहीं रहती। बड़ी बहन की स्थिति को देखकर शाहीन विवाह से पूर्व आत्महत्या कर लेती है। इन सब परिस्थितियों के परिणामस्वरुप हुमैरा दादी के रुढ़िवाद की दहलीज़ को लांघ जाती है, एक डाक्टर के क्लीनिक में रिसेप्शनिस्ट की नौकरी कर लेती है। हुमैरा की नौकरी से घर के हालात में सुधार आता है। अब दादी के बार–बार हुमैरा के विवाह कर देने की बात पर उसके माता–पिता ध्यान नहीं देते। हुमैरा सोचती है।–" क़ैद और आज़ादी के बीच अकलमन्द आज़ादी को चुनेगा दादीजान ! आपकी फेंकी कमन्द से दूर मुझे वहाँ तक जाना है जहाँ आसमान और ज़मीन मिलते हैं।"[6] आलोच्य युगीन उर्दू लेखिकाओं की कहानियों में भी शिक्षा के लिए संघर्षरत पात्र मिलते हैं। ग़ज़ाल ज़ैगम की कहानी 'सूर्यवंशी चंद्रवंशी' में रुही लॉ करना चाहती है परन्तु उसका पूरा खानदान मान मर्यादा की दुहाई देकर उसे रोकते हैं परन्तु रुहि विरोध के बाद भी लॉ करती है। रुहि एक निडर पात्र है चाचा के कहने पर कि "ये भला लड़कियों के पढ़ने की कोई चीज़ है।' बड़े चचा चीखे। रुहि का उत्तर "बड़े चचा ये चीज़ नहीं है कोई, इल्म है इल्म और इल्म हासिल करना मेरा हक़ है।"[7] इसी तरह निगार अज़ीम की 'हिसार' कहानी में जाहिदा अपनी बेटी की पढ़ाई के लिए आवाज़ उठाती है। सिर्फ इसलिए जाहिदा की बेटी की शिक्षा पर रोक लग जाती है, क्योंकि कक्षा के कुछ सहपाठियों के साथ शाहिदा की तस्वीर जाहिदा के पति को मिल जाती है। खानदान के मान सम्मान के नाम पर शाहिदा को पढ़ाई छोड़ने पर विवश करते हैं। स्वंय इस अन्याय की शिकार हुई जाहिदा अपनी निर्दोष बेटी को इसका शिकार नहीं होने देना चाहती। जब जाहिदा का पति जाहिदा को थप्पड़ मारता है, क्योंकि जाहिदा ही शाहिदा की शिक्षा की पक्षधर थी। जाहिदा अब डरती नहीं बोल पड़ती है।–"थप्पड़ खाने के बाद ज़ाहिदा संभली...और अपनी तमाम कुव्वत बटोरकर वह दहाड़ी.. बस खामोश हाथ मेरा भी उठ सकता है मेरी बेटी पढ़ेगी ज़रुर पढ़ेगी।"[8] अतः लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री का यह विद्रोह उसकी परंपरिक छवि को तोड़ता है। स्त्री के बदलते स्वरुप को रेखांकित करता है।

आलोच्य युगीन स्त्री अब पढ़ लिखकर उच्च पदों पर भी असीन है। यह नौकरीपेशा स्त्री अपने कार्यक्षेत्र के अतिरिक्त पति और बच्चों के साथ गृह कार्यों का दायित्व भी निभाती है। कुछ ऐसी भी स्त्रियाँ भी हैं जो अविवाहित हैं। माता–पिता और भाई बहनों का दायित्व उनके कंधों पर है। यह स्त्री अब माता–पिता पर भार नही है बल्कि उनका सहारा है। ऐसी स्त्रियों से हमारा साक्षातकार आलोच्य युगीन हिन्दी उर्दू लेखिकाओं की कहानियों में भी होता है। हिन्दी में मृदुला गर्ग के कहानी संग्रह 'शहर के नाम' की कहानी 'चकरघिन्नी' की लेखा हार्ट स्पेशलिस्ट है साथ ही आदर्श पत्नी और माँ भी है। चित्रा मुद्गल कें कहानी संग्रह 'जिनावर' की कहानी 'सुख' की सुमंगलता विधवा है पति की मृत्यू के बाद अकेले बेटी को पाल रही है। यूनिवर्सिटी में प्रवक्ता के पद पर है। चित्रा मुद्गल के इसी संग्रह की कहानी 'स्टेपनी' की आभा नौकरी पेशा हैं साथ ही घर परिवार का बोझ भी ढोती हैं। 'स्टेपनी' कहानी में आभा नौकरी के साथ घर भी संभालती है और बेटी चिंकी को क्रेच छोड़ने की जिम्मेदारी भी उसी की है। उसका पति विनोद उसकी नाममात्र को भी सहायता नहीं करता। मेहरुन्निसाँ परवेज़ के 'अम्मा' कहानी संग्रह की 'सज़ा' कहानी की उमा नौकरीपेशा है और माता–पिता भाई बहनों का खर्च उठाती है। उमा की बैंक नौकरी से घर की आर्थिक स्थिति में सुधार आ जाता है।– "बरसों के घिसे–पिटे

समान से मुक्ति मिली थी।....घर की दशा में सुधार आ गया था।... मोहल्ले में दबी ज़बान में चर्चा करते, देखो फलाँ की बेटी बेटे से बढ़कर गुणी निकली; कैसे बेटे के बराबर कमाकर बाप को दे रही है। उमा सारे मुहल्ले के लिए उदहारण बन गई थी। अम्मा और बाबूजी प्रसन्न रहने लगे थे कि उनके भी दिन फिर गए। उनकी कोख से ऐसी सुघड़ कन्या ने जन्म लिया।"[9] ममता कालिया की कहानी 'जाँच अभी जारी है' कि अपर्णा बैंक में कार्यरत है। उर्दू में जीलानी बानों की कहानी 'कव्ल अज़ मरगे़ बयाँ' में डॉ शाहिदा ने जर्मनी से दर्शनशास्त्र में डाक्टरेट की डिग्री प्राप्त की है। कॉलेज में लेक्चरर हैं। "इसलिए तो सारी क्लास की आँखे इहतराम से झुकी रहती हैं। मैडम ने जर्मनी से डाक्टरेट किया है। पाँच वर्ष यूरोप में रही हैं। तीन किताबें लिख चुकी हैं। जब मैं यूनिर्वसिटी के कॉरीडोर से गुज़रती थी तो दूसरे प्रोफेसर दूर हट जाते थे।"[10] 'आगही' कहानी की नायिका विवाह के बाद बच्ची को गोद में लेकर पढ़ाई पूरी करती है और एक कम्पनी में नौकरी करती है साथ ही पति सास–ससुर को भी प्रसन्न रखने का प्रयत्न करती है। वह इतनी व्यस्त और प्रैक्टिकल है। कि अपने पति के अन्य स्त्री से प्रेम होने का सच जानकर उसे अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। निगार अज़ीम के कहानी संग्रह की कहानी 'फर्ज़' की नायिका अपने बीमार पिता के कारण नौकरी कर लेती है और उनके इलाज के खर्च से लेकर उनकी सेवा करना अपना फर्ज़ समझती है। ज़किया मशहदी की कहानी 'ये मौज ए हवादिस' की सवा भी नौकरी पेशा है पूरे घर की जिम्मेदारी उसके कंधों पर है। इस प्रकार आधुनिक स्त्री आर्थिक रुप से स्वाबलंबी है। और समाज में एक अलग ही पहचान रखती है।

आलोच्य युग में स्त्री को पंचायती राजव्यवस्था में संवैधानिक स्तर पर आरक्षण प्राप्त हुआ। जिसके कारण ग्रामीण स्त्रियाँ भी राजनीति में भाग लेने लगीं। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को लेकर महिला लेखिकाओं ने कहानियाँ लिखीं और राजनीतिक स्तर पर स्त्री की यर्थाथ स्थिति को कहानियों में चित्रित किया। आलोच्य युग में लिखी गई मैत्रेयी पुष्पा की 'फैसला' और 'सेंध' कहानियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। 'फैसला' कहानी में वसुमति गाँव की प्रधान है वसुमति के प्रधान बनने पर गाँव की स्त्रियाँ अत्यन्त प्रसन्न होती हैं। इसुरिया अपनी प्रसन्नता व्यक्त करती हुई कहती है–"झमककर बोली पिरधान हो गई अब तो। चलो सुख हो गया। संटी उठाकर ज़ोर से बोलने लगी–एऽऽ, सब जनी सुनो, सुन लो कान खोल के ! बरोबरी का जमाना आ गया। अब ठठरी बांधे मरद मारा कूटी करें,... दायजे के पीछे सतावें, तो बैन सुधी चली जाना वसुमति के ढिंग।"[11] परन्तु इसुरिया की खुशी अधिक समय तक नही रहती क्योंकि वसुमति नाममात्र की प्रधान है। उसका पति ही उसके पद का प्रयोग करता है। पंचायती चबुतरे पर भी नही जाने देता; यह कहकर अच्छे घर की स्त्रियाँ पंचायती चबुतरे पर शोभा नहीं देती। वसुमति शिक्षित स्त्री है। गाँव वालों पर किये गये अपने पति के अन्याय और अत्याचार से क्षुब्ध हो ब्लॉक प्रमुखी के चुनाव में खड़े अपने पति को वोट न देकर विरोधी पार्टी के उम्मीदवार को अपना वोट देती है। रनवीर एक वोट से हार जाता है। अतः वसुमति गाँव के हित में एक फैसला लेती है और उसका फैसला उसे अपूर्व तृत्ति देता है। उर्दू में ग़ज़ाल जैग़म की कहानी 'मुश्त ए ख़ाक़' भी महत्वपूर्ण है। 'मुश्त ए खाक' की फुलवा निम्न वर्ग की है। अतहर मियाँ उसे चुनाव में खड़ा कर देते हैं। और फुलवा प्रधान बन जाती है। प्रधान बनने पर एक नई फुलवा सामने आती है। बधाई देने आये मुसाहिव के फुलवा का नाम लेकर सम्बोधित करने पर फुलवा गुस्से में आ जाती है–"अब हम पहले वाली फुलवा नहीं हन जी को जइसे चाहें पुकार लो। जानों के नाही ? नाहीं हम तुम्हरे हकाये पे चले वाले जिनावर हन। अब हमको पिरधान कहकर पुकारो जाने के नाहीं।"[12] फुलवा का यह आत्मविश्वास स्त्री के परिवर्तित स्वरुप को रेखांकित करता है।

आधुनिक स्त्री जागरुक और सशक्त है। अपने साथ हुए हर अन्याय और अत्याचार का विरोध करती है, और अपराधी को सज़ा भी दिलवाना चाहती है। पहले ऐसा नहीं था स्त्री अपने साथ होने वाले शोषण और अत्याचार को चुपचाप लोकलाज के भय से सहन करती रहती थी। यहाँ तक दुराचार होने पर स्त्री ही अजीवन सज़ा भुगतती थी। और अपराधी आराम से घूमता था। समय के साथ स्त्री में बदलाव आया और अब उसे मिथ्या लोकलाज की जंज़ीरें नहीं रोक सकती हैं। लेखिकाओं की कहानियों में भी ऐसे पात्र मिलतें हैं; जो न्याय के लिए संघर्ष करते हैं। हिन्दी में चित्रा मुद्गल की कहानी 'प्रेतयोनी' की नीतू अपने साथ हुए दुराचार के प्रयास के लिए टैक्सी चालक को सज़ा दिलवाना चाहती है, जबकि नीतू के माता पिता लोक लाज के भय से नीतू को घर में नज़र बंद कर देते हैं। क्योंकि नीतू के टैक्सी चालक की हवस का शिकार होने से बच जाने की गाथा समाचार पत्र की सुर्खियाँ बन जाती हैं। उसके माता–पिता को लोकलाज सताने लगता है और वह इस बात से मुकरने लगते हैं, कि अखबार में छपी ख़बर की नीतू उनकी अनीता नहीं कोई और है। अनीता को लगता है, यह कैद एक दो दिन की नहीं जीवन भर की है। अतः वह निर्णय लेती है, कि अपने कॉलेज के साथियों से मिलकर अपने लिए इंसाफ की माँग करेगी भले ही उसे अपने परिवार से ही क्यों न लड़ना पड़े। अनीता के शब्दों में–"वह एक से लड़ सकती है–पाँच से क्यों नही लड़ सकती ? अब वह अकेली भी तो नहीं।....कल सुबह वह भी होगी आई. टी. ओ. स्थित पुलिस मुख्यालय के सामने विरोध प्रदर्शन के लिए एकजुट होती अपनी पीढ़ी के साथ।"[13] इसी तरह जीलानी बानों की कहानी 'आगही' में दफ्तर में काम करने वाला सहकर्मी सितारा के साथ दुराचार का प्रयत्न करता है। सितारा के पिता और ससुराल के लोग उसे अपने साथ हुए अन्याय को भूल जाने के लिए कहते हैं। क्योंकि उन्हें बदनामी का डर सताने लगता है। परन्तु नायिका अपने साथ हुए अपमान के लिए अपराधी को सज़ा दिलवाना चाहती है–" मैं तो उस कुत्ते को मौत की सज़ा दिलवाऊँगी भला कोई हद है। ये दो कौड़ी के मर्द क्या समझतें हैं कि जब चाहें औरत की इज़्ज़त पर हमला कर दो। अब उसे मालूम होगा मज़ाक नहीं है मेरी इस तरह तौहीन करना।"[14] बानों सरताज के कहानी संग्रह 'दायरों के कैदी' में 'एक घूँट ज़हर' की नायिका भी अपने साथ हुए दुराचार के अपराधियों को दण्ड दिलवाना चाहती है। अतः स्त्री का यह रुप उसके परम्परागत रुप से भिन्न है।

आलोच्य युगीन हिन्दी–उर्दू लेखिकाओं की कहानियों में हमें स्त्री आत्मसम्मान की भावना से पूर्ण द्रष्टव्य होती है। आलोच्य युगीन कहानियों के स्त्री पात्र पति के शोषण और अन्याय को नही सहते। पति के अन्याय से क्षुब्ध स्त्री विवाह विच्छेद करने पर भी नही हिचकती। अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए पति का घर छोड़ देती है। हिन्दी में नमिता सिंह की 'या देवी सर्वभूतेषु' पति रोहन को तलाक दे देती है, क्योंकि रोहन उसे परम्परागत पत्नी बने रहने पर विवश करता जो घर की चहारदीवारी में कैद रहे घर के काम और पति की सेवा करे। यहाँ तक की उसे मारता पीटता है। देवयानी का अस्तित्व ही समाप्त कर देना चाहता है। अन्ततः देवयानी जो विवाह से पूर्व एक बोल्ड और निडर लड़की थी। रोहन के अत्याचारों ने उसे तोड़ कर रख दिया था। दद्दा के कारण देवयानी की चेतना जाग्रत होती है। और अपनी तलाक के मुकद्दमें की भागदौड़ स्वंय करती है। तलाक के बाद मुक्ति की साँस लेती है। 'दर्द' की सुन्नरी का पति उसका सममान नही करता। अन्य

स्त्री से सम्बंध रखता है सुन्नरी को यह अपना अपमान लगता है–"सुन्नरी की मानों कोई हस्ती ही नहीं यह गहरा अपमानबोध उसे भीतर तक चीर गया।"[15] अतः वह अपने पति को छोड़कर मायके आ जाती है। नासिरा शर्मा की 'खुदा की वापसी' की फरज़ाना मेहर के लिए पति द्वारा बोले गये झूठ के कारण पति का घर छोड़ देती है। नासिरा शर्मा की कहानी 'नयी हुकूमत' में हाजरा का पति पत्नी के रहते दूसरा विवाह कर लेता है। हाजरा के विरोध करने पर अल्ताफ उसे तलाक की धमकी देता है हाजरा यह कहते हुए अल्ताफ का घर छोड़ देती है–"मुझे तलाक देगा मैं खुद उसे छोड़कर जा रही हूँ। मैं खुद उसे तीन बार नहीं छह बार तलाक देती हूँ। मैं तलाक के डर से ऐरे–गैरों की जूतियाँ सीधी करने वाली नही हूँ; लो संभालो अपना घर।"[16] मेहरुन्निसाँ परवेज़ की कहानी 'बूँद का हक' की नायिका भी पति द्वारा अपमानित होने पर उसका घर छोड़ देती है। उर्दू में शकीला अख्तर की कहानी 'गैगरीन' की नायिका डेसी अपने पति को अन्य स्त्री के साथ देख लेती है और उसका घर छोड़ देती है। मेरी जॉनसन को इंटरव्यू में डेसी कहती है।– "मैं अपने बाप के घर लौट आई टूटी फूटी...परसी ने मुझे बुलाने के लिए क्या–क्या कोशिश नहीं की। लेकिन मैं इतनी टूट गई थी कि दुनिया भर से कट कर रह गई थी मम्मी और पापा बहुत परेशान थे। लेकिन मैं अपने तौर पर फैसला कर चुकी थी कि किसी पर बोझ न होऊँगी और खुद अपनी हस्ती को बर्बाद होने से बचाती रहूँगी।"[17] तबस्सुम फातमा के कहानी संग्रह 'लेकिन जज़ीरा नहीं' की कहानी 'कथा' में राशिदा व्याभिचारी पति की हत्या कर देती है। तरन्नुम रियाज़ के कहानी संग्रह 'अबाबीलें लौट आयेगी' की 'मेरा पिया घर आया' कहानी भी पति पत्नी सम्बंधों पर आधारित है। जिसमें नायिका शमा पति के व्यवहार से क्षुब्ध हो उसे उसी के हाल पर छोड़ प्रसन्न रहने के अन्य तरीके ढूढ़ लेती है। गज़ाल जैगम की 'नेक परवीन' कहानी में नायिका कनीज़ पति को खुश रखने के लिए हर संभव प्रयास करती है परन्तु जब पति नही सुधरता तो वह अपने लिए जीने लगती है और नेक परवीन का चोला उतार फेंकती है। कुछ ऐसी भी पत्नियाँ है जो पति के लिए जीवन समर्पित कर देती हैं। हिन्दी में सूर्यबाला की कहानी मुक्ति पर्व की नायिका पति की मृत्यू के उपरान्त पति पर चल रहे मुकद्दमे लड़ती है और पति को सभी आरोपों से मुक्ति दिलाती है।

आधुनिक स्त्री स्व अस्तित्व के लिए जागरुक है। वह समाज में अपनी अलग पहचान चाहती है। नमिता सिंह की कहानी 'या देवी सर्वभूतेषु' की देवयानी भीड़ का हिस्सा नही बनना चाहती। वह अपनी अलग पहचान चाहती है। –" देवयानी कभी भीड़ का हिस्सा नही बनी।...भीड़ जैसी लहरों का नामालूम सा कतरा बनना, जिसका कोई चेहरा न हो–उसके लिए हमेशा मृत्यू का पर्याय रहा है। बिना किसी पहचान के भीड़ में गुम हो जाना...और मौत क्या होती है।"[18] उर्दू में तबस्सुम फातमा की कहानी 'नदामत' की रुबी भी अपनी पहचान चाहती है। रुबी अपनी नन्ना से कहती है–" ये लोग जो मेरे बारे में जाने क्या–क्या उल्टी सीधी बातें कहते रहते हैं ये लोग एक एक करके मेरी राहें मसदूद करना चाहते हैं। लेकिन मुझे उनकी कतई परवाह नहीं नन्ना, क्योंकि ये हज़ारों वे नाम चेहरे जो हर रोज़ जाने कहाँ दफन हो जाते हैं कौन जानता है उन्हें; इनसे अलग अपनी शिनाख्त कायम करनी है नन्ना, हमें भी अपना हक पाना है।"[19] वही आधुनिक स्त्री इतनी जागरुक है, कि अपने जीवन से जुड़े फैसले स्वंय लेना चाहती है। हिन्दी में मृदुला गर्ग की कहानी 'बाहरीजन' की नन्दिनी विवाह के कई वर्षो के बाद भी माँ नही बन सकी। जिसके लिए नन्दिनी के ससुर उसे अप्राकृतिक प्रक्रिया से शिशु उत्पन्न करने पर विवश करते हैं। नन्दिनी को लगता है, कि उसका निजी मामला है। वह इसमें किसी का हस्तक्षेप नहीं चाहती। नन्दिनी के शब्दों में–"यह मेरा निजी मामला है। बच्चा चाहती हूँ या नहीं, मेरा निर्णय है। हो सकता है या नहीं मेरा भाग्य है। हो सकने के कुछ करना न करना मेरी समस्या है। आपको क्या अधिकार है, मुझसे जिरह करने का।....अपनी चाहत मुझपर थोपकर मेरे जेलर बनने का अधिकार आपको नहीं।"[20] उर्दू में बानों सरताज की कहानी 'तीसरे रास्ते के मुसाफिर' कहानी की शहज़ादी अपनी मर्जी से विवाह करना चाहती है। लड़के वाले उसे पसन्द कर लेते हैं परन्तु शहज़ादी अपनी सहेली से कहती है, कि उसकी खुद की पसन्द भी मायने रखती है शहज़ादी के शब्दों में "उसके पसन्द कर लेने से क्या मैं भी उसे पसन्द कर लूँगी? मेरी पसन्द की भी कुछ अहमियत है या नहीं।"[21] और शहज़ादी अपने प्रेमी के साथ भाग जाती है। अतः लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री के परिवर्तित स्वरुप को देखकर मृदुला गर्ग बीसवीं सदी की अन्तिम दशकों की कहानियों में स्त्री के स्वरुप को लेकर कहा गया कथन हिन्दी और उर्दू लेखिकाओ की स्त्री जीवन से संबंधित दोनो भाषाओं की कहनियों पर सटीक बैठता है–"इस दशक में बहुत सी ऐसी कहानियाँ लिखी गई हैं, जिनमें स्त्री पात्राओं ने वे मुखौटे उतार फेंके हैं, जो मर्द मानसिकता ने उन्हें पहना रखे थे। मातृत्व और वात्सल्य की प्रतिमूर्ति का मुखौटा। जलनखोर दूसरी औरत का मुखौटा। क्षमाशील देवी सती का मुखौटा।...मन की आवाज़ से तर्क को ध्वंस करने वाली गुह्य जादूगरनी का चेहरा।....अब जाकर स्त्री के चारों तरफ का तिलिस्म टूट रहा है और चेतना जन्म ले रही है।"[22]

अन्ततः दोनो भाषाओं की लेखिकाओं की कहानियों का अध्ययन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। कि दोनों भाषाओ की कहानियों में स्त्री का स्वरुप लगभग एक जैसा है। दोनों ही भाषाओं में लेखिकाओं की कहानियों के स्त्री पात्र जागरुक स्वाबलंबी और आत्मनिर्भर हैं। कहानी को व्यक्त करने की भाषाएँ भले ही अलग है। शिल्प में अंतर है। लेकिन स्त्री चरित्र और उनके जीवन की समस्याएँ समान हैं। शायद इसलिए कि लेखिकाओं का परिवेश और उनका देश तथा युगीन परिस्थितियाँ समान हैं। कोई बहुत भारी अन्तर मुझे दिखाई नहीं देता। अक्सर जब भी इन दोनों भाषाओं के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है तो विद्वान यह दिखाने का प्रयत्न करते हैं कि दोनों भाषाओं साहित्य में व्यापक अंतर है यदि हिन्दी के विद्वान दोनों विषयों की तुलना करते हैं तो उर्दू के साहित्य को हिन्दी से कमतर बताते हैं वहीं उर्दू के विद्वान हिन्दी को। परन्तु यह सोचने की बात है कि जब भी देश में कुछ हलचल हुई चाहें स्वतंत्रता के लिए संघर्ष की बात हो चाहें देश विभाजन हो या आपातकाल हो, या फिर स्त्री या दलित की व्यथा हो, दोनों ही भाषाओं के साहित्यकारों ने एक जुट हो इन विषयों पर साहित्य रचना की। अतः कहा जा सकता है कि साहित्य किसी भी भाषा का हो मनुष्य जीवन और समाज को तद्युगीन परिस्थितियों में प्रकट करता है। हिन्दी उर्दू लेखिकाओं की कहानियों में व्यक्त स्त्री के स्वरुप में यह बदलाव स्त्री के विकास की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। सदियों से दासता सहती स्त्री का स्वतंत्रता के लिए किया गया उसका स्वंय का प्रयत्न है।

संदर्भ

1. नीरा देसाई/उषा ठक्कर : भारतीय समाज में महिलाएं, अनुवाद सुभी धूसिया, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया दिल्ली 2011, पृ. 148
2. तरन्नुम रियाज़ : उर्दू की अदीबायें मंज़र पश मंज़र, फिकरो तहक़ीक पत्रिका अक्टूबर से दिसम्बर 2013, पृ. 217

3. अर्चना वर्मा : बीसवीं सदी की हिन्दी कहानी का स्त्री अध्याय, कथा साहित्य के सौ बरस, संपादक विभूति नारायण शिल्पायन प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2001, पृ. 182
4. कमलेश्वर : नई कहानी की भूमिका, पृ. 30
5. नसिरा शर्मा : खुदा की वापसी, भारतीय ज्ञीनपीठ दिल्ली तीसरा संस्करण 2001, पृ. 72
6. वही : पृ. 79
7. गज़ाल जैगम : एक टुकड़ा धूप, यूनाइटेड बुक प्रिन्टर्स लखनऊ, प्रकाशन सन 2000, पृ. 18–19
8. निगार अज़ीम : गहन, जे. आर. आफसेट प्रिन्टर्स दिल्ली 1999, पृ. 107
9. मेहरुन्निसा परवेज़ : अम्मा, ज्ञानगंगा प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1997, पृ. 25
10. जीलानी बानों : सच के सिवा, एजुकेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, संस्करण 1997, पृ. 44–45
11. मैत्रेयी पुष्पा : सम्पूर्ण कहानी संग्रह, पृ. 527
12. गज़ाल जैगम : एक टुकड़ा धूप, यूनाइटेड बुक प्रिंटर्स लखनऊ, प्रकाशन 2000, पृ. 109
13. चित्रा मुद्गल : प्रेतयोनी, जिनावर कहानी संग्रह, किताबघर प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2010, पृ. 25
14. जीलानी बानो : आगही, सच के सिवा, एजुकेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, 1997, 57
15. नमिता सिंह : दर्द, नीलगाय की आँखें वाणी प्रकाशन दिल्ली 1990 पृ. 127
16. नासिरा शर्मा : नयी हुकूमत, खुदा की वापसी, भारतीय ज्ञानपीठ तीसरा संस्करण 2001, पृ. 161
17. शकीला अख्तर : गैगरीन, आखिरी सलाम, नुसरत पब्लिशर्स अमीनाबाद लखनऊ 1986, पृ. 155
18. नमिता सिंह : या देवी सर्वभूतेषु, नीलगाय की आँखे, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 1990, पृ. 25
19. तबस्सुम फातमा : नदामत, लेकिन जज़ीरा नही, तखलीककार पब्लिशर्स नई दिल्ली, 1995, पृ. 57
20. मृदुला गर्ग : बाहरीजन, शहर के नाम, भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली संस्करण 2009, पृ. 62
21. बानों सरताज : तीसरे रास्ते के मुसाफिर, उसके लिए संग्रह, मकतब जामिया दिल्ली 1994, पृ. 27
22. मृदुला गर्ग : चुकते नहीं सवाल, सामयिक प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2007, पृ. 54–55